स्क्रिप्ट: धर्म या विश्वास की आज़ादी के लिए सीमाएं

समाचार देखने और शायद अपने जीवन के अनुभव से आपको पता चल जाएगा कि कई सरकारें धर्म या विश्वास की आज़ादी पर सीमाएं लगाती हैं। वे तर्क देती हैं कि धार्मिक अभिव्यक्ति को सीमित करने की आवश्यकता के अनेक कारण हैं। तो हम कैसे जानें कि सीमाएं कब उचित और आज्ञा पाने योग्य हैं, और कब नहीं?

अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार कानून के अनुसार धर्म या विश्वास को मानने, चुनने, बदलने, या छोड़ने का अधिकार असीम है - यह कभी सीमित नहीं हो सकता है। वहीं दूसरी ओर, एक धर्म या विश्वास को प्रकट करने का अधिकार प्रतिबंधित हो सकता है, लेकिन केवल तभी जब चार नियमों का पालन किया जाता है।

1. कोई भी सीमा कानून के द्वारा ही होनी चाहिए। इसके पीछे की मंशा यह है कि राज्य को, पुलिस को, और अदालतों को अप्रत्याशित रूप से या असंगत कार्य करने से रोकना है।
2. सार्वजनिक सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था, स्वास्थ या नैतिकता, या दूसरों के अधिकारों और आज़ादियों की रक्षा के लिए सीमा होना जरूरी है। यह महत्वपूर्ण है। दूसरे लोगो की रक्षा के लिए सीमा निर्धारित करना या वोट जीतने के लिए सीमा निर्धारित करने, दोनो में बहुत अंतर है।
3. सीमाएं भेदभाव वाली नहीं होनी चाहिए,
4. और अभिव्यक्ति के कारण पैदा हुई समस्या के अनुपात में ही कोई सीमा को होना चाहिए।

ये नियम वास्तव में महत्वपूर्ण हैं। उनके बिना, सरकारें किसी एक या सभी समूह या प्रथा को सीमित कर सकती हैं, जिसे वह पसंद नहीं करती। सीमाएं अंतिम उपाय होनी चाहिए, न कि राज्य नियंत्रण के लिए एक औज़ार।

आइये, नियमों का क्या अर्थ है, यह स्पष्ट करने के लिए एक मनगढ़ंत उदाहरण का हम उपयोग करें।

एक ऐसे शहर की कल्पना करें जहां पांच अलग-अलग धार्मिक समूह हैं। उन सभी के पास आराधना स्थल हैं, और वे सभी कुछ हद्द तक शोर करते हैं, पड़ोसी जिसकी सराहना नहीं करते! लेकिन पुलिस को केवल एक छोटे, अलोकप्रिय समूह के बारे में ही शिकायतें मिलती हैं ...

स्वास्थ और सार्वजनिक स्वास्थ के लिए उच्च स्तर का शोर हानिकारक हैं, और सीमाओं के लिए एक वैध आधार भी। इसलिये स्थानीय सत्ता में अधिकारियों को क्या करना चाहिए? किस प्रकार के नियम आवश्यक हैं, गैर-भेदभावपूर्ण और जो सार्वजनिक स्वास्थ की रक्षा के लिए अनुपातिक हैं?

इस मामले में, एक ऐसा कानून जिस के द्वारा सभी सभाओं के लिए एक सामान्य शोर की मात्रा निर्धारित करना उचित होगा। एक कानून जो सभी धार्मिक समूहों और दूसरों के लिए समान रूप से लागू होता हो। यदि किसी समूह का शोर निर्धारित मात्रा से अधिक है, तो उसे कम करने या ठीक मात्रा में रखने को कहना उचित होगा, नही तो जुर्माना लगाना। पूर्ण रूप से शोर बंद करने की मांग करना या उनकी सभा आयोजित करने पर ही प्रतिबंध लगाना अनुपातिक नही होगा।

और पुलिस को कानून को समान रूप से लागू करना होगा, भले ही उन्हें केवल अलोकप्रिय समूहों के बारे में ही शिकायतें मिलें।

यह एक छोटा, मामूली सी उदाहरण है।

जब हम धर्म या विश्वास की आज़ादी के प्रमुख उल्लंघनों पर नज़र डालते हैं, तो आमतौर पर यह आसानी से दिखता है कि इन नियमों को अनदेखा किया जा रहा है, क्योंकि प्रतिबंध स्पष्ट रूप से इतने अनावश्यक, भेदभावपूर्ण या असमान हैं।

कुछ देश पंजीकृत इमारतों के बाहर होने वाली सभी धार्मिक गतिविधियों पर प्रतिबंध लगाते हैं। इससे, अपने घर में रात का खाना खाने से पहले, मे हमानों के साथ धन्यवाद की प्रार्थना करना अवैध हो जाता है! यह सीमा स्प ष्ट रूप से वैध नहीं है!

लेकिन बहुत सारे विवादास्पद मामले हैं। क्या फ्रांस के एक शहर के महापौर के लिए बुर्किनिस पर प्रतिबंध लगाना ठीक है - तैराकी पोशाक जो चेहरे और पैरों के अलावा पूरे शरीर को ढ्क देती है? या भारत के कुछ हिस्सों में अधिकारियों द्वारा दूसरों को अपने विश्वास के बारे में बताने के अधिकार को सीमित करना?

इस प्रस्तुति में हम सात प्रश्नों को देखने जा रहे हैं, जिन्हे अदालतों को यह निर्धारित करने के लिए पूछना चाहिए कि क्या सीमाएं वैध हैं। उम्मीद है कि यह आपको उन सीमाओं का मूल्यांकन करने में सहायता करेगा जिसका आप सामना करते हैं।

जब कोई राज्य प्रतिबंध लगाता है, तो पूछने वाला पहला प्रश्न यह है कि क्या सीमा धर्म या विश्वास को मानने या इसे अपनाने के असीम अधिकार में हस्तक्षेप करती है। या धर्म को प्रकट करने के अधिकार में हस्तक्षेप करती है।

यदि असीम अधिकार को सीमित किया गया है, तो राज्य के कार्य वैध नहीं हैं। लेकिन अगर धर्म को प्रकट करने का अधिकार सीमित है, तो हम अपने अगले प्रश्न पर आगे बढ़ते हैं।

क्या व्यवहार, धर्म या विश्वास के प्रकटीकरण पर सीमित है, या सिर्फ एक व्यवहार है ?

जो काम हम करते हैं वे अक्सर हमारे विश्वासों द्वारा निर्देशित होते हैं। लेकिन हम जो कुछ भी करते हैं वह सभी धर्म या विश्वास की एक संरक्षित अभिव्यक्ति नहीं है। जब कोई शिकायत करता है कि धर्म को प्रकट करने के उनके अधिकार को सीमित कर दिया गया है, तो अदालत पहले यह फैसला करने को सोचती है कि क्या संबंधित व्यवहार धार्मिक या विश्वास की अभिव्यक्ति है। वे व्यवहार और विश्वास के बीच संबंध को देखकर ऐसा करते हैं कि क्या उनके बीच कोई अटूट सम्बन्ध है कि नहीं.

कभी-कभी यह बहुत आसान है. चर्च जाना ईसाईयत से घनिष्ट तौर पर जुड़ा हुआ है, और रोज़ा रखना इस्लाम धर्म से.

लेकिन यह हमेशा इतना आसान नहीं है. एक ईसाई के लिए क्रूस पहनना इतना महत्वपूर्ण नहीं; लेकिन दूसरे के लिए, वह धार्मिक

पहचान की एक गहरी अभिव्यक्ति है. और मुसलमान महिलाओं में सिर ढंकने के बारे में अलग-अलग मान्यताएं हैं.

कौन से विश्वास सही हैं, इसका फैसला करने का काम अदालत का नही है। धार्मिक प्रकटीकरण क्या है, इसका फैसला करते समय अदालतें उन धार्मिक सिद्धांतों पर निर्णय लेने का जोखिम उठाती हैं जो कुछ धार्मिक व्याख्याओ को दूसरी व्याख्याओं से अधिक प्राथमिकता देते हैं। व्यक्तियों के लिए मानव अधिकारों को आयोजित किया गया है, इसलिए सम्बंधित व्यक्ति के विश्वास को अदालतें विस्तार से देखती हैं न कि संस्थागत सिद्धांतों को; और तर्क यह है कि अगर वह व्यक्ति किसी कार्य को धार्मिक अभिव्यक्ति मानता है, तो उस के लिए वह कार्य वैसा ही है।

एक बार जब हमने यह स्थापित कर दिया कि एक संरक्षित अभिव्यक्ति सीमित है, तो हमे यह जांचना होगा कि क्या यह सीमा कानून में दर्शायी गई है।

क्या कोई ऐसा लिखित कानून, नज़ीरी कानून या परंपरागत कानून है जो सीमा को नियंत्रित करता है? या क्या यह बिना किसी कानूनी आधार के अधिकारियों द्वारा थोपा जा रहा है? यदि कोई कानूनी आधार नहीं है, तो सीमा वैध नहीं है।

अगला कदम यह जांच लेना की क्या वैध आधार की रक्षा के लिए सीमा आवश्यक है। इसका उत्तर देने के लिए, हमें सबसे पहले यह जांचने की आवश्यकता है कि सीमित प्रथाओं और वैध आधारों के बीच क्या कोई सीधा सम्बंध है, और दूसरी बात जांच कर लें कि क्या सीमा आवश्यक है? आइए, इन सवालों में से प्रत्येक को बारी-बारी से परखें।

अंतरराष्ट्रीय कानून के तहत, धर्म या विश्वास की आज़ादी को सीमित करने के लिए एकमात्र वैध आधार सार्वजनिक सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था, स्वास्थ या नैतिकता या दूसरों के अधिकार और आज़ादी की सुरक्षा है ।

तो व्यवहार सीमित होने से कैसे इन आधारों के लिए खतरा है? और क्या इसका कोई सबूत है?

वह प्रथाएं जिन को सीमित किया गया हो और इनमें से वैध आधारों में से एक के बीच का एक सीधा सम्बंध राज्य को प्रदर्शित करना होगा।

हिंदू जाति व्यवस्था लोगों को उच्च और निम्न जातियों और जातिहीन समूहों में विभाजित करती है। जातिहीन समूह बड़े पैमाने पर भेदभाव और सामाजिक और आर्थिक नुकसान का सामना करते हैं। कुछ मंदिरों में जातिहीन हिंदुओं को प्रवेश करने से रोक दिया जाता था। भारत ने सन 1949 में जाति व्यवस्था को समाप्त कर दिया, और मंदिरों में अब जातिहीन हिंदुओं को प्रवेश से इंकार करने की इज़ाजत नहीं है। यह सीमा परीक्षा की कसौटी पर खरी उतरती है - जाति भेदभाव पर रोक-थाम लगाने और दूसरों के अधिकारों और आज़ादियों की रक्षा के बीच एक स्पष्ट, सीधा सम्बंध है।

लेकिन सभी सीमाओं में इतना स्पष्ट सम्बंध नहीं है, और कभी-कभी सरकार वैध आधारों का गलत मायने लगाती है या दुरुपयोग करती है। धर्म या विश्वास की आज़ादी की सीमाएं अक्सर सार्वजनिक व्ययवस्था से संबंधित होती हैं। सार्वजनिक व्ययवस्था के कानून, खतरों, हमले, हिंसा के लिए उत्तेजना और कभी-कभी ईश्वर-निंदा सहित कई मुद्दों को नियंत्रित करते हैं।

धर्म या विश्वास को प्रकट करने की आज़ादी में यह कहने का अधिकार ज़रूर शामिल है, जिसे आप सच मानते हैं। स्पष्ट रूप से विश्वासों को शांतिपूर्वक या हिंसा को उत्तेजित करने वाले ढंग से व्यक्त किया जा सकता है। अफसोस की बात तो यह है कि कुछ लोग अपने विश्वास के अलावा दूसरों के विश्वासों की शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति से इतने नाराज़ हो जाते हैं कि वे हिंसा के साथ जवाब देते हैं।

कुछ राज्य तो ख़ास मान्यताओं की शांतिपूर्ण अभिव्यक्ति पर प्रतिबंध लगाते हैं, यह तर्क देते हुए कि सार्वजनिक हिंसा के खतरे के कारण ऐसा करने के लिए उनके पास वैध सार्वजनिक व्यवस्था के प्रयाप्त आधार हैं । इंडोनेशिया इस आधार पर अहमदी या नास्तिक मान्यताओं की सार्वजनिक अभिव्यक्ति पर प्रतिबंध लगाता है। इसके फलस्वरूप, हिंसा के पीड़ितों पर ईश्वर-निंदा या उत्तेजना जैसे आरोप लगाये जाते हैं, न कि दोषी व्यक्तियों पर हमले का दोष।

इस तरह के कानून हिंसा को कम नहीं करते हैं। इसके बजाए, वे इस विचार को मज़बूत करते हैं कि जिन लोगों के पास 'गलत' मान्यताएं हैं उन्हें दंडित किया जाना चाहिए।

लागू करने के लिए **सार्वजनिक नैतिकता** एक अन्य मुश्किल आधार है। क्या हर किसी के पास एक जैसी ही नैतिकता है, और किसकी नैतिकता 'सार्वजनिक' है? संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार विशेषज्ञों का कहना है कि सार्वजनिक नैतिकता की परिभाषा "कई सामाजिक, दार्शनिक और धार्मिक परंपराओं" से निकलनी चाहिए। दूसरे शब्दों में, आप अकेले बहुमत की नैतिकता पर सीमाओ का आधार नहीं बना सकते हैं।

यह जानकार आप आश्चर्यचकित हो सकते हैं कि धर्म या विश्वास की आज़ादी को सीमित करने के लिए **राष्ट्रीय सुरक्षा** एक वैध आधार नहीं है।

कुछ सरकारें समूहों को दानव के रूप में दर्शाती हैं, ख़ासकर ऐसे समूह जो किसी दुश्मन देश के धर्म को मानते हों, उन्हें राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा बताते हुए। सम्मेलन के लेखकों ने इस बात पर सहमति व्यक्त की कि सार्वजनिक स्वास्थ, सुरक्षा और व्यवस्था, सीमा तय करने के लिए पर्याप्त गुंजाइश देती है, और राष्ट्रीय सुरक्षा को इसके साथ जोड़ने से धर्म या विश्वास की आज़ादी को अयोग्य बनाने का खतरा मोल लेती हैं, जबकि यह अति आवशयक है।

इसलिए हमने यह साबित कर दिया है कि राज्य को एक **सीधा सबंध** प्रदर्शित करना ही है, यह दर्शा कर कि जिन प्रथाओं को सीमित किया गया है वह कैसे वैध आधार के लिए खतरा पैदा करती हैं। हमने यह भी देखा है कि यह जांचना महत्वपूर्ण है कि वैध आधारों की सही व्याख्या और उसे सही तरीके से लागू किया जा रहा है कि नहीं।

आइये हम अपने प्रश्न के दूसरे भाग पर चलते हैं - क्या सीमा आवश्यक है? एक राजनीतिक या बहुमत दृष्टिकोण से वांछनीय नहीं है, लेकिन आवश्यक है।

आइये हम अपने प्रश्न के दूसरे भाग पर चलते हैं - क्या सीमा आवश्यक है? एक राजनीतिक या बहुमत दृष्टिकोण से वांछनीय नहीं है, लेकिन ज़रूरी तो है।

मान लीजिए कि सरकार ने दर्शाया है कि उनके द्वारा प्रस्तावित सीमा और दूसरों के अधिकारों और आज़ादियों की सुरक्षा के बीच एक सीधा संबंध है।

क्या खतरा इतना गम्भीर है जिससे सीमा निर्धारित करने की प्रेरणा मिलती है?

क्या प्रस्तावित सीमा अन्य लोगों के अधिकारों की सुरक्षा करने में प्रभावी होगी?

और अधिकारों को सीमित किए बिना क्या समस्या को हल करने के अन्य तौर-तरीके हैं?

यदि समस्या इतनी गंभीर नहीं है, यदि प्रस्तावित सीमा इसे हल करने में योगदान नहीं देगी या यदि अधिकारों को सीमित किए बिना इसे हल करने के अन्य तरीके हैं, तो सीमा आवश्यक नहीं है।

चीन की सरकार ने भीड-भाड वाले बौद्ध प्रशिक्षण केंद्रों के बारे में स्वास्थ और सुरक्षा की चिंता जताने का दावा किया। स्वास्थ और सुरक्षा वैध आधार हैं। एक समाधान यह हो सकता है कि केंद्रों का पुनर्निर्माण और विस्तार करें। इस समाधान से अधिकार सीमित नहीं होंगे। इसके बजाए, सरकार ने पूरे क्षेत्रों को ध्वस्त कर दिया और 1000 मठवासिनियों को वहां से जबरन हटा दिया। यह ज़रूरी नहीं था।

बेशक, कुछ सीमाएं जरूरी हैं। संयुक्त राष्ट्र ने स्पष्ट रूप से कहा है कि हानिकारक पारंपरिक प्रथाओं को प्रतिबंधित किया जाना चाहिए, जैसे कि कुछ दीक्षा अनुष्ठान और मादा जननांग विकृति ।

बेशक, कई मामले इतने स्पष्ट नहीं हैं। लेकिन सीमा ज़रूरी है, यह साबित करने का बोझ बेशक राज्य के ऊपर होता है।

एक बार जब हमने स्थापित कर दिया कि राज्य के पास वैध आधार हैं और सीमा ज़रूरी है, तो हमें यह जांचना होगा कि क्या सीमा भेदभावपूर्ण है ।

आपको लगता होगा कि यह देखना आसान है कि क्या कानून, नीतियां या प्रथाएं भेदभावपूर्ण हैं । और क्या वे स्पष्ट रूप से कुछ लोगों पर लागू होती हैं, और दूसरों पर नहीं। इसे प्रत्यक्ष भेदभाव कहा जाता है, और यह प्रतिबंधित है।

लेकिन कभी-कभी कानून जो हर किसी के लिए एक समान लागू होते हैं, उसका कुछ लोगों पर अधिक प्रभाव पड़ता है, और दूसरों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसे अप्रत्यक्ष भेदभाव कहा जाता है।

आइए हम अपने काल्पनिक शहर और शोर भरे आराधना स्थलों पर लौटें। परिषद ने सार्वजनिक कार्यक्रमों में ध्वनि की मात्रा को सीमित करने वाला कानून लागू किया है, और धार्मिक समुदायों ने अपने ध्वनि-विस्तारक यंत्रों को उसी प्रकार से नियमित कर लिया है। लेकिन चर्च की घंटी की आवाज़ बहुत उंची हैं, और आप उसकी ध्वनि को कम नहीं कर सकते हैं। चर्च को पारंपरिक प्रथा को छोड़ना होगा, जबकि अन्य समुदायों को कोई समस्या नहीं है।

यह अप्रत्यक्ष भेदभाव है।

सामान्य कानूनों के अनेक उदाहरण हैं जिनके फलस्वरूप अप्रत्यक्ष भेदभाव होता है:

कई देश सार्वजनिक स्थानों पर चाकू ले जाने पर प्रतिबंध लगाते हैं। सिखों को छोडकर इसका बाकी धार्मिक और विश्वास समूहों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। सिख पुरुषों को अपनी कमीज़ के नीचे एक संस्कारी चाकू, जिसे किरपान कहते हैं, पहनना पड़ता है। इसलिए सिख पुरुषों को अपने धार्मिक दायित्वों को पूरा करने की क्षमता को कानून सीमित करता है।

कुछ देशों में नियोजन विनियम के अंतर्गत नई ईमारतों की निर्माण योजना के लिए बाजू-वाली ईमारतों के मालिको की अनुमति लेना अनिवार्य है। लेकिन पड़ोसी पक्षपात कर सकते हैं, इसलिए पारंपरिक समूहों को छोटे, गैर-पारंपरिक समूहों की तुलना में योजना की अनुमति प्राप्त करना आसान लगता है।

नीतियां और प्रथाएं भी समस्याएं पैदा कर सकती हैं। यदि एक विश्वविद्यालय हमेशा शनिवार को प्रवेश परीक्षा आयोजित करता है, तो एड्वेंटिस्ट और आज्ञाकारी यहूदी इस से वंचित होते हैं । अक्सर अल्पसंख्यक धार्मिक समूहों के श्रमिकों को अपने स्वयं के धार्मिक त्यौहारों के संबंध में अपनी छुट्टी लेने की इज़ाजत देने की बजाय उन्हे बहुसंख्यक धार्मिक त्यौहारों के संबंध में छुट्टी लेनी पड़ती है।

प्रत्यक्ष भेदभाव हमेशा प्रतिबंधित है। लेकिन अदालतों को अप्रत्यक्ष भेदभाव को एक व्यवहारिक समस्या मानकर, जहां कहीं सम्भव

हो, उसका समाधान उचित रूप से करना चाहिए। और अक्सर सरल समाधान मिल सकते हैं। हमारे काल्पनिक शहर में, रविवार और धार्मिक त्योहारों पर चर्च की घंटी बजाने की इज़ाजत अपवाद के रूप में परिषद दे सकती है।

स्वीडन में, विश्वविद्यालय की प्रवेश परीक्षा केवल शनिवार को ही आयोजित की जाती थी। लेकिन वे अब शुक्रवार को भी आयोजित की जाती हैं। और कार्यस्थलों में वर्दी को अनुकूलित करने के लिए उस में अक्सर उचित परिवर्तन किये जा सकते हैं, जैसे कि पगडी पहनना।

लेकिन अदालतें मानती हैं कि यह हमेशा संभव नहीं है। अप्रत्यक्ष भेदभाव वैध हो सकता है, अगर यह साबित किया जा सके कि उसके लिए अच्छा पर्याप्त कारण है - इसके लिए एक निष्पक्ष वजह।

उदाहरण के लिए, अस्पताल संक्रमण नियंत्रण नीतियां जो कर्मचारियों द्वारा गहने पहनने पर प्रतिबंध लगाती हैं उस से कुछ समूहों को हानि होती है। यह सार्वजनिक स्वास्थ के आधार पर उचित है। सार्वजनिक स्वास्थ निश्चित रूप से धर्म या विश्वास की आज़ादी को सीमित करने के लिए एक वैध आधार है। लेकिन अप्रत्यक्ष भेदभाव के संबंध में, अदालतें अन्य आधार भी स्वीकार करती हैं। उदाहरण के लिए, एक कंपनी यह तर्क दे सकती है कि उनकी नीतियों को बदलने से कंपनी के हितों को हानी पहुंचेगी। एक कपड़े की दुकान का मालिक जो चहता है की विक्रेता उसके उत्पाद से बने कपड़े पहनें, उसे ऐसे विक्रेता को नियोजित करने की आवश्यकता नहीं होगी जो धार्मिक आधार पर कंपनी के उत्पाद किये कपड़ों को पहनने से इनकार करता है।

इसलिए जब की प्रत्यक्ष भेदभाव पर प्रतिबंध लगा दिया गया है, लेकिन अप्रत्यक्ष भेदभाव को जहां तक हो सकता है, उचित तरीकों को ढूंढकर व्यक्तियों और समूहों की आवश्यकताओं को मान्यता देकर, टालना चहिए ।

एक बार जब हमने यह स्थापित कर लिया है कि सीमा भेदभावपूर्ण नहीं है, तो हमें यह तय करने की आवश्यकता है कि क्या यह अनुपातिक है ।

अभिव्यक्ति को किस हद्द तक सीमित किया जाना चाहिए? क्या प्रतिबंधित किया जाना चाहिए, किसके लिए, कब और कहाँ?
विशेष प्रकार के कार्यस्थलों में विशेष व्यवसायों के लिए विशेष प्रकार के धार्मिक कपड़ों पर प्रतिबंध लगाने और सड़क पर धार्मिक कपड़े पहनने से हर किसी पर प्रतिबंध लगाने के बीच बहुत बड़ा अंतर है! तो अंतरराष्ट्रीय अदालतें अनुपातिकता को देखती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका में न्यायालय भी एक कठोर परिक्षण लागू करते हैं - सीमाओं को कम-से-कम प्रतिबंधित तरीके से लागू किया जाना चाहिए।
एक अंतिम पहलू जिसे कुछ अदालतें ध्यान में रखती हैं, वह है सराहना **की गुंजाईश ।** दुनिया विविध है, और मानव अधिकार सिद्धांतों को राष्ट्रीय संदर्भ पर आधारित कई अलग-अलग तरीकों से लागू किया जा सकता है।
इस वजह से कुछ अंतरराष्ट्रीय अदालतें स्थानीय संदर्भ में 'सराहना का सिध्दांत' लागू करती हैं, बुनियादी तौर पर जिसका मतलब है कि राष्ट्रीय अधिकारी, राष्ट्रीय संदर्भ को बेहतर समझते हैं, और राष्ट्रीय कानून बनाने के लिए उनसे बेहतर समझ कोई नहीं रखता, इसलिए अंतर्राष्ट्रीय अदालतें उनके फैसलों पर निर्भर करती हैं ।
राज्य के विवेकाधिकार के लिए सराहना की मात्रा कितनी होनी चाहिए, और क्या अदालतें बहुत व्यापक मात्र में छूट देती हैं, यह बहस का एक महत्वपूर्ण विषय है!

सारांश में:

ये सोचते हुए कि क्या सीमा अनुमती योग्य है, हम निम्नलिखित प्रक्रिया का उपयोग करते हैं

i) निर्णय लीजिये कि क्या कानून आपके धर्म या विश्वासों या अभिव्यक्ति को मानने या बदलने के असीम अधिकार को सीमित करता है।
ii) निर्धारित करें कि क्या व्यवहार जिसे सीमित किया गया है, वह सुरक्षित अभिव्यक्ति है।
iii) जांच करें कि क्या सीमा का कोई कानूनी आधार है

iv) निर्धारित करें कि किस हद्द तक अभिव्यक्ति सीमा लगाने के कानूनी आधार के लिए खतरा पैदा करती है, जैसे कि दूसरों के अधिकारों और आज़ादियों पर।

v) जांचें कि क्या सीमा सीधे-सीधे या अप्रत्यक्ष रूप से भेदभावपूर्ण है।

vi) और विचार करें कि सीमा, पैदा किये गए खतरे के अनुपात में है, और इसका सामना करने में प्रभवशाली होगी।

जब हम उन तर्कों को समझते हैं जिन्हें अदालतों द्वारा मानव अधिकारों का अनुपालन करने के लिए उपयोग करना चाहिए, तो हम और अधिक प्रभावी ढंग से अपने अधिकारों पर दावा कर सकते हैं। हम इस बारे में सार्वजनिक बहस में भी पूरी तरह से योगदान दे सकते हैं कि अदालतें और सरकार इसे सही तरीके से लागू कर रही हैं या फिर वे वास्तव में धर्म या विश्वास की आज़ादी का उल्लंघन कर रही हैं।

Copyright SMC 2018